बालाकोट में 300 आतंकी मरे या नहीं...भारतीय मीडिया ने अपनी नाक जरूर कटा ली

बालाकोट में आतंकियों के मारे जाने की संख्या पर मोदी सरकार अब तक न तो कोई बयान दे सकी न सफाई

मुकेश कुमार सिंह

मैं तीन दशक से पेशेवर और भारत सरकार से मान्यता प्राप्त पत्रकार हूं। सैन्य अभियानों और संसद तथा अक्षरधाम आतंकी हमलों जैसी बड़ी घटनाओं की भी टीवी के लिए रिपोर्टिंग करने का अवसर मिला। सियाचिन, लेह, गुरेज़, उरी जैसे इलाकों की सीमान्त चौकियों पर भी जाने का मौका मिला। रक्षा मंत्रालय से मान्यता प्राप्त 'डिफेंस कॉरेस्पोंडेंट' भी रहा। संसद, पीएमओ, कैबिनेट सेक्रेटेरिएट, राष्ट्रपति भवन, विदेश-गृह और वित्त मंत्रालय का भी दशकों तक बीट रिपोर्टर रहा। असंख्य खबरें 'सूत्रों' से बटोरीं और जिम्मेदारी के साथ प्रसारित कीं। मेरी पीढ़ी में कई लोगों ने ऐसा किया।

अब वो सारी बातें इतिहास हो चुकी हैं। अब पत्रकार या तो जल्दी में हैं या राजनीतिक खिलौना बन चुके हैं। ऐसे माहौल में 'सूत्र' का मतलब 'सरकारी प्लांट' या 'भक्तों की गोदी पत्रकारिता' बन चुका है। वायुसेना के मिशन बालाकोट के बाद तो पत्रकारिता ने अपने पतन का नया ऑर्बिट (चक्र) ख़ुद ही बना लिया है। इसके लिए भले ही खबर प्लांट करने वालों को जिम्मेदार ठहराया जाए, लेकिन इससे भी बड़ा सवाल ये है कि क्या खबरें प्लांट करने वाले अफ़सरों की ख़ामियों की वजह से मीडिया अपने बुनियादी उसूलों को नज़रअंदाज़ करके युद्धोन्माद फ़ैलाने में जुट जाएगा? वैसे तो नासमझ पत्रकारों और सम्पादकों की वजह से पत्रकारिता की जो छीछालेदर होनी थी, वो तो हो चुकी।

अपने 44 जवान पुलवामा में मरवाए जो सिलसिला रुक नहीं रहा! मोदी सरकार को और गोदी मीडिया को इस मोर्चे पर कुछ नहीं सीखना ?

लेकिन बेहतर होगा कि इससे सबक लिया जाए।

बालाकोट के आतंकी ठिकानों पर देर रात को हमला करने के बाद भारत सरकार को इसका ब्यौरा देने में असामान्य वक्त क्यों लगा? ख़ासकर, तब जब पाकिस्तानी सेना के प्रवक्ता ने तड़के 5 बजे ही ट्वीट कर दिया हो। हमारे विदेश सचिव विजय केशव गोखले को प्रेस कॉन्फ्रेंस की तैयारी करते-करते सवा 11 बजे तक इंतज़ार क्यों करना पड़ा? विदेश और रक्षा मंत्रालय तथा ख़ुद प्रधानमंत्री भी तो ट्वीट कर सकते थे। वैसे भी प्रेस कॉन्फ्रेंस का मतलब ही होता है – सवाल-जवाब।

जब अफ़सरों को पत्रकारों के सवाल ही नहीं सुनने थे तो फिर उन्होंने प्रेस कॉन्फ्रेंस बुलायी ही क्यों? प्रेस रिलीज़ और साउंड बाइट तो बग़ैर पत्रकारों को बुलाये भी जारी की जा सकती थी। पत्रकारों को सरकार की ओर से ऑन-रिकॉर्ड तो छोड़िए, ऑफ़ रिकॉर्ड भी ब्रीफ़िंग क्यों नहीं की गयी?

सरकार ने ये साफ क्यों नहीं किया कि भारतीय वायुसेना ने जिस बालाकोट को निशाना बनाया वो है कहां? पाक अधिकृत कश्मीर में या पाकिस्तान के उत्तर पश्चिमी सूबे ख़ैबर-पखतून में? सरकार ने ये भी साफ़ नहीं किया कि मुहिम में कितने विमानों ने हिस्सा लिया? कितनों ने नियंत्रण रेखा पार की? कितने 'स्टैंड बाई' पर रहे? ये बहुत छोटे-छोटे, लेकिन अहम सवाल हैं। इन्हें लेकर ही सूत्रों ने अलग-अलग लोगों को इतनी अलग-अलग बातें बतायीं कि हमारा मीडिया कवरेज़ ही हास्यास्पद हो गया। इस बारे में सरकार ने अगर एक बयान दे दिया होता या ये कह दिया होता कि अभी ये जानकारियां सार्वजनिक नहीं की जा सकतीं, तो मीडिया खुद भी उलझन में नहीं पड़ता और न देश को अलग-अलग तरह की जानकारियां दी जातीं।

इसी तरह, यदि सरकार ने हमले से पाकिस्तान को हुए नुकसान का ब्यौरा देने से परहेज़ किया तो रिपोर्टरों ने किस आधार पर ये तय कर लिया कि तीन सौ आतंकवादी, उनके 25 प्रशिक्षक और जैश-ए-मोहम्मद के प्रमुख मसूद अज़हर के दो भाई और एक साला मारे गये? बेशक़ भारत सरकार के पास सबूत होंगे, लेकिन उन्हें दुनिया के सामने लाया जाना चाहिए था। ख़ासकर तब, जब पाकिस्तान का ये दावा हो कि हमलों से कोई ख़ास नुकसान नहीं हुआ।

यही स्थिति अगले दिन की प्रेस कॉन्फ्रेंस में भी रही। पाकिस्तानी विमानों ने भारतीय सीमा में घुसपैठ की।भारतीय वायुसेना ने हमले का जवाब दिया। दोनों देशों के विमान मार गिराये गये। भारत का पायलट दुश्मन की सीमा में पकड़ा गया। संचार क्रान्ति के मौजूदा दौर में सारी दुनिया को बहुत कुछ पता चलता रहा। ट्विटर और वीडियो, अपने काम की धूम मचाते रहे, लेकिन भारत सरकार का ढर्रा वही बाबा आदम के ज़माने वाला रहा। इसीलिए विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने ब्यौरा देने से पहले ही कोई सवाल नहीं पूछने की शर्त का ऐलान कर दिया। जब यही करना था तो प्रवक्ता अपने साथ वायुसेना के अफ़सर को लेकर क्यों पहुंचे? इतनी सी बात के लिए तो प्रेस कॉन्फ्रेंस होनी ही नहीं चाहिए थी। इसके लिए एक लिखित बयान काफी होता।

क्या सरकार हमेशा सही जानकारी देती है

यदि मीडिया को कम जानकारी देना किसी रणनीति का हिस्सा है तो फिर सरकार को ये सुनिश्चित करना चाहिए था कि सूत्रों की आड़ में ग़लत जानकारियां नहीं फैले। इससे देश, सेना और अन्य संस्थाएं और उनकी विश्वसनीयता कमज़ोर होती है। सूचना तंत्र ग़लत हाथों में खेलने लगता है। कल्पना कीजिए कि यदि अमेरिका ने लादेन को मार गिराने का सबूत सारी दुनिया के सामने नहीं रखा होता तो क्या उसकी वैसी धाक बन पाती, जैसी है।

दूसरी ओर, यदि भारत सरकार किसी भी वजह से सबूत को सामने नहीं रखना चाहती, तो उसे हमले का पूरा ब्यौरा मीडिया के ज़रिये सबके सामने रखना चाहिए था। इसी ब्यौरे को रिपोर्टरों को जब आधिकारिक रूप से नहीं दिया जाता है तो उस जानकारी को 'सूत्रों' के हवाले से प्राप्त जानकारी कहते हैं। ये 'सूत्र' सरकार में बैठे लोग ही होते हैं। वो जब अपनी पहचान को ज़ाहिर नहीं करना चाहते, तब 'सूत्र' बन जाते हैं।

पत्रकारिता में 'सूत्रों' के माध्यम से जानकारी देने का तरीक़ा विश्वव्यापी और हमेशा से है। होशियार रिपोर्टर और सम्पादक जब ऐसी जानकारियों को प्रकाशित या प्रसारित करते हैं तो क़ानून की नज़र में अपनी ख़ाल बचाने के लिए 'दावा है कि', 'अपुष्ट जानकारी है कि' और 'कहा जा रहा है कि' जैसे जुमलों का इस्तेमाल किया जाता है। इसी तरह, जब किसी के खिलाफ़ किसी आरोप की बात की जाती है तब ये अपेक्षित है कि सम्बन्धित व्यक्ति से उसका पक्ष ज़रूर जाना जाए। इसीलिए जब इस 'पक्ष की सफ़ाई या ब्यौरा' सामने नहीं होता तो लिखा जाता है कि 'उनकी प्रतिक्रिया नहीं मिली' या उन्होंने 'बात करने से इनकार कर दिया'।

पत्रकारिता के इन्हीं बुनियादी उसूलों का यदि बालाकोट हमले की रिपोर्टिंग में ख़याल रखा गया होता तो अलग-अलग मीडिया में अलग-अलग बातें नहीं दिखायी देतीं। 'अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग' वाला रवैया पत्रकारिता के अलावा भारत की गरिमा को भी धूमिल करता है। इसी जोख़िम को देखते हुए 2008 के मुम्बई के आतंकी हमलों के दौरान सरकार ने मीडिया के लिए जो दिशा-निर्देश तैयार किये थे, उसमें ये भी है कि पत्रकार अपुष्ट जानकारी नहीं प्रसारित करेंगे और सरकार की ओर से उन्हें मुनासिब जानकारियां मुहैया करवायी जाएंगी। तब सम्पादकों की दलील थी कि यदि सरकार हमें सही ब्यौरा नहीं देगी तो हमारे लिए ग़लत जानकारियों के प्रसारण को रोकना बहुत मुश्किल होगा।

बदकिस्मती से इस बार सारी पुरानी बातों को भुला दिया गया। ऐसा क्यों हुआ? दरअसल, मौजूदा दौर में मीडिया का भी राजनीतीकरण हो चुका है। कई चैनल और अख़बार सारी पत्रकारीय मर्यादाओं को ताक़ पर रखकर राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता की तरह काम करने लगे हैं। इसीलिए, इन्हें भक्त पत्रकार भी कहा जाने लगा है। एक ज़माना था जब ख़बरों की प्रमाणिकता यानी क्रेडिबिलिटी को मीडिया का आभूषण माना जाता है, लेकिन अभी तो दौर भेड़-चाल का है।

कर्मचारियों के एचआरए का 150 करोड़ रुपये हर महीने दबा रही है हरियाणा सरकार

ग्रुप डी भर्ती की आड़ में भी खट्टर सरकार ने की दगाबाजी

मजदूर मोर्चा ब्यूरो

चंडीगढ़: सातवें वेतन आयोग के तर्ज पर मकान किराया भत्ता (एचआरए) लागू नहीं होने से हरियाणा के करीब तीन लाख कर्मचारियों और अधिकारियों में भाजपा सरकार के प्रति भारी रोष है। अब जबकि देश और हरियाणा राज्य चुनाव के कगार पर खड़ा है, अगर खट्टर सरकार एचआरए की नई दरें नहीं लागू करती है तो अगले दो-चार दिनों में चुनाव की तारीखें घोषित होने वाली हैं और आचार संहिता लगने पर यह घोषणा और उस पर अमल रुक जाएगा। अगर अगली बार भाजपा फिर से लौटती है तो सवाल ही पैदा नहीं होता कि वह हर महीने 150 करोड़ का बोझ उठाएंगी। हालात ये बनेंगे इसे ठंडे बस्ते में डाल दिया जाएगा।

प्रदेश के कर्मचारी भाजपा सरकार की नीतियों से परेशान है, लेकिन सरकार को कर्मचारियों की कोई सुध नहीं है। जब से सातवां वेतन आयोग लागू हुआ है, तब से हरियाणा सरकार में कार्यरत 3 लाख कर्मचारी नई दरों पर एचआरए लागू होने का इंतजार कर रहे हैं, लेकिन सरकार ने कर्मचारियों के हित में अभी तक कोई फैसला नहीं लिया। कर्मचारी लगातार धरना-प्रदर्शन करके अपनी मांग उठा रहे हैं। सरकार की लापरवाही के कारण हर कर्मचारी को तीन से आठ हजार का नुकसान हो रहा है। पांच हजार रूपये महीना का औसत मानें तो तीन लाख कर्मचारियों का 150 करोड़ रुपये महीना सरकार खा रही है।

हरियाणा सरकार ने साल 2016 में प्रदेश में केंद्र की तर्ज पर सातवां वेतन आयोग लागू तो कर दिया, लेकिन कर्मचारियों को मकान किराया भत्ता अभी भी छठे वेतन आयोग के हिसाब दिया जा रहा है जो कि लाखों कर्मचारियों के साथ अन्याय है।

एनएचएम, सफाई, रोडवेज, अध्यापक कर्मचारियों की हड़ताल के बाद सर्व कर्मचारी संघ हरियाणा से संबंधित चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी यूनियन और आल हरियाणा फील्ड कर्मचारी यूनियन सिंचाई विभाग कर्मचारियों की छंटनी के विरोध में प्रदेशभर के कर्मचारी धरने पर बैठे हुए हैं लेकिन सरकार को इनकी कोई परवाह नहीं है।

कर्मचारी सीधा-सीधा सरकार द्वारा की गई ग्रुप डी की भर्ती पर भी सवाल खड़ा कर रहे है। कर्मचारियों का कहना है कि ग्रुप डी की भर्ती की आ? में सरकार अपने निजी ठेकेदारों को फायदा पहुंचाने के लिए लगभग पांच सालों से लगे हुए कर्मचारियों की छंटनी कर दी, जबकि ग्रुप डी की भर्ती में जिन पदों पर कर्मचारियों को लगाया गया है, हटाए गए कर्मचारी उन पदों पर कार्य न करके दूसरे पदों पर कार्य कर रहे थे।

अगर लोकसभा और विधानसभा चुनाव की आचार संहिता लगने से पहले हरियाणा सरकार ने यह घोषणा नहीं की तो कर्मचारी चुनाव में इसे एक प्रमुख मुद्दा बनाएंगे। अन्य कर्मचारी संगठनों के लिए भी यह एक बेहतरीन अवसर है। चुनाव को देखते हुए अगर वे इस समय कोई आंदोलन खड़ा करते हैं तो सरकार की मुश्किलें बढ़ सकती हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक सतीश कुमार ने अपने स्वामित्व में एजीएस पब्लिकेशन्स, डी-67, सैक्टर-6, नोएडा से मुद्रित करवा कर 1 डी/2बी.पी. नियर हार्डवेयर चौक, एनआईटी फरीदाबाद से प्रकाशित किया। Postal Reg. No. L/H.R/FBD/463-06